Reviews of Literature
Impact Factor : 1.4716 (UIF)
Volume 2 , Issue 5 / Dec 2014 ISSN:-2347-2723

'भारतीय संत साहित्य में प्रगतिशील चेतना'

मीरा जोशी

(हिंदी विभाग) , कै.दिगंबरराव बिंदू कला वाणिज्य विज्ञान महाविद्यालय, भोकर ता.भोकर , जि.नांदेड.

सारांश-

किसी भी साहित्य के माध्यम से समकालीन समाज, संस्कृति और साहित्यिक मूल्यों को प्रतिपादित करनेवाला साहित्य प्रगतिशिल साहित्य कहलाता है। समाज हमेशा परिवर्तनशील होता है, सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ साहित्यिक मूल्यों में भी बदलाव आता है। कुछ विचार और मूल्य इतने कालजयी होते है कि, वह हमें सदैव उनकी आवश्यकता होती है। ऐसी कालजयी रचनाओं का महत्त्व हर काल हर युग में होता है। वही साहित्य प्रासंगिक और प्रगतिशील माना जाता है। हमारा भारतीय संत साहित्य आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना पहले था। किसी भी युग के साहित्य को पढ़कर हम उस युग के सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश को जान सकते है। भारत में अलग-अलग भाषा में अनेक संतो ने समाज का मार्गदर्शन किया है। इन संतो ने समाज को नयी दिशा व दृष्टि दी है।

प्रस्तावना-

संत साहित्य मानव जीवन का उध्दार करनेवाला साहित्य है। इन संतो की वाणी लोकजीवन से जुड़ी हुई है। साहित्यिक मर्यादा की कसौटी पर संत साहित्य खरा उतरा है और वह मानव जवीन को बेहतर दिशा देता है। संत साहित्य का सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और मानवता वादी पक्ष आज भी प्रासंगिक है। निराशा और अंधकार में भटके हुए जनमानस को अपनी वाणी से मंत्रमुग्ध करने का कार्य भारतीय संतो ने ही किया है। भारतीय संत चाहे वे हिन्दी, मराठी, गुजराती, कन्नड, तमिल या अन्य भाषी हो उन्होंने जो कार्य किया है, वह आज भी प्रेरणादायी है। संत साहित्य की रचनाएँ आज समाज जीवन के लिए आवश्यक है। इस दृष्टि से देखा जाये तो संत साहित्य का महत्त्व जितना मध्यकाल में था उतना आज भी है।

आज पूरी दुनिया एक ग्लोबलायझेशन में समाहित होने को है। इस इक्कीसवीं सदी को इंटरनेटने कैद कर रखा है। इस सदी ने बहुत कम समय में अपना चेहरा-मोहरा बदल लिया है। आज मनुष्य बदल गया है। समाज में रिश्ते-नाते बदल गये है। पूरी व्यवस्था ही नही बल्कि हमारी संस्कृति में भी भारी बदलाव आ गया है। हमारा मानवतावादी भाईचारा भी बदलता हुआ नजर आ रहा है। समाज में आज अराजकता, भ्रष्टाचार, अनाचार, सामाजिक, धार्मिक विकृतियाँ, अत्याचार व्यभिचार आदि घातक प्रवृत्तियाँ मुँह फैलाए सामने खड़ी है। एक ओर हम उत्तरोत्तर प्रगति करते जा रहे है तो दूसरी ओर पूरानों मूल्यों के प्रति आस्था को खोते जा रहे है। बाप-बेटी पर अमानुष अत्याचार कर रहा है तो भाई बाप का गला घोंट रहा है तो दूसरी ओर बेटे माँ के दुश्मन बने हुए है। ऐसे समय में हमे एक आशा की किरण दिखाई देती है, तो वह सिर्फ संत साहित्य ही इन सब समस्याओं को मात देता है। भौतिकवाद के कारण अपनी हर कामना की पूर्ति के लिए मनुष्य धन का संचय कर रहा है। मानव धन को अत्यधिक महत्त्व दे रहा है। लेकिन संत साहित्य ने धन को धूलिपत स्वीकार किया है संत साहित्य ने धनसंचय की निंदा की है। इसलिए कबीर कहते है-

''कबीर सो धन संचियो जो आगे कूँ होई।
सीस चढाये पोटली ले जात न देख्या कोई'' [१]

आज के इस इंटरनेट के युग में भी मानव रुढि एवं परंपराओ से जकड़ा हुआ है। बाह्याडंबर, अंधश्रध्दा, कर्मकांड और धार्मिकता के नाम पर आम लोगों का शोषण किया जा रहा है। इन सब आडंबरो के विरोध में, महात्मा कबीर, गुरुनानक, महात्मा बसवेश्वर, संत तुकाराम, संत नामदेव, संत सावता माली, ज्ञानेश्वर आदि महान संतो ने आवाज लगाई। उन्होंने शोषित, पिडित मानव की सेवा को ईश्वर की सेवा मानी है। इन संतो ने निर्गुण, निराकार ईश्वर की भक्ति का संदेश देकर मूर्तिपूजा का खंडन किया है। गौतम बुध्दने भी यही संदेश दिया था। असल में मनुष्य मात्र की सेवा ही ईश्वर की सेवा है यह भारतीय संत साहित्य का मूल तत्त्वज्ञान है। पर आज इन मूल तत्त्वज्ञान को मनुष्य भूल चुका है। उसकी सोंच विकृत बनती जा रही है। वह अपने आप को संकुचित बनाता जा रहा है। जिन भारतीय संतों ने अपने विचार वैश्विक स्तर पर पहुँचाए है उनको भी इसी दायरे में बाँध दिया जा रहा है। महाराष्ट्र के महान संत तथा विचारक संत नामदेव ने अपने तत्त्वज्ञान को सिर्फ महाराष्ट्र तक ही सिमित नही रखा बल्कि उसे देशव्यापी बनाया है। वे अपने विचारो तथा तत्त्वज्ञान से अखंड भारत का निर्माण करना चाहते थे। उच-नीच, जात-पात, छुआ-छुत का खंडन कर वे अखंड भारत का सपना देखते है। ऐसे समय में संत तुकाराम मानवीय मूल्यों को जगाते हुए कहते है-

''जे का रंजले, गांजले
त्यासी म्हणे जो आपुले
साधू तोचि ओळखावा
देव तेथे चि जाणवा।।''[२]

ज्ञानेश्वर महाराज ने तो पसायदान में विश्वकल्याण की मनोकामना की है। लोकहित, लोककल्याण एवं गरिबों का दु:ख दर्द दूर होने की कामना की है। भारतीय संस्कृति हमेशा 'विश्वकुटुम्बक:' की प्रेरणा देती है। इसी उपदेश को ज्ञानेश्वर ने पसायदान में दिया है-

''दुरितांचे तिमिर जाओ,
हे विश्व स्वधर्म सूर्य पाहो।''[३]

पसायदान में उन्होंने विश्व में शांति, सद्भावना, प्रेम और परस्पर मानव में दया रखने के लिए ही प्रार्थना की है। मनुष्य के अंदर जो अहं और काम क्रोध, लोभ मत्सर है उसको जला कर सत्कर्म बढाने की कामना की है।

संत साहित्य में दिखाई देनेवाले राजनीतिक विचार तत्कालीन परिस्थितियों से प्रभावित है। आज के राजनीतिक परिस्थितियों में भारत में जनता का शासन दिखाई देता है। जनता के मतों के आधार पर ही राष्ट्र का शासक चुना जाता है। संत कवि तुलसीदास ने अपने 'रामचरितमानस' में राम को आदर्श राजा के रुप में चित्रित करते हुए वे लिखते है-

''जासूराज प्रिय प्रजा दुखारी।
सो नृप अवसि नरक अधिकारी।।''[४]

इस पंक्ति का तात्पर्य यही है कि, राजा हमेशा प्रजाहित दक्ष होना चाहिए वह जनता के दु:ख, दर्द, पीड़ा, यातना को सुलझाने वाला चाहिए। आगे तुलसी यह भी कहते है कि, जिस राजा की प्रजा दु:खी होती है वह यातना भोगी होता है। आज जनता का शासन होने के बावजूद भी व्यवस्था में भ्रष्ट व्यक्तियों की घुसपैठ हो गयी है। आज महंगाई ने जनता की कमर तोड डाली है। इस राजनीतिक व्यवस्था में जनता अनेक समस्याओं से ग्रस्त है, जनता के दु:ख दर्द की तो कोई सीमा नही रही है। अत: संत साहित्य में वर्णित आदर्श राजा और कल्याणकारी राज्य व्यवस्था की आज भी आवश्यकता दृष्टिगोचर होती है।

भारतीय संतों ने अपने साहित्य में कर्म को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। आज समाज में आलसी और कामचोर प्रवृत्ति बढ़ रही है। कर्मयोग में जीवन की सार्थकता माननेवाले संतों के विचार आज भी प्रासंगिक है। सब लोग कर्म करेंगे तो ही देश की प्रगति सम्भव है। कर्म ही ईश्वर है, इस संदर्भ में संत सावता माली कहते है-

''कांदा मूळा भाजी-अवघी विठाई माझी।''[५]

संत तुकाराम ने अपने साहित्य के माध्यम से समाजवादी विचारधारा का पुरस्कार किया। समाज में जो प्रचलित अवमानताएँ चल रही थी उसका विरोध तथा उसका खंडन तुकाराम महाराज ने किया है। भक्ति के लिए समानता दरवाजा सबके लिए खोलने वाले यही संत थे। जाति, वर्ण, बाह्याचार का विरोध कर धर्म निरपेक्षता को इन्होंने अपनाया है। वर्णभेद के विरोध में क्रांतिकारी विचार रखनेवाले संत तुकाराम ही थे। प्रकृति में जो-जो व्याप्त है, उसपर सभी का अधिकार है चाहे वह मनुष्य जाति, वर्ण से कोई भी क्यों न हो। वे कहते है-

''विष्णुमय जग, वैष्णवाचा धर्म।
भेदाभेद भ्रम-अंमलग।।''[६]

समग्र भारतीय समाज का कल्याण भक्ति के माध्यम से करना भारतीय संतो का उद्देश्य रहा है। भक्ति आंदोलन के दूसरे प्रमुख महत्त्वपूर्ण प्रणेता गुरुनानक थे। जो मानवियत की रक्षा के लिए दर-दर भटकते रहे। जनेऊ धारण करना, ब्राम्हण भोज सूर्य को अर्कदान, आदि मिथ्याचारों का इन्होंने खुलकर विरोध किया है। नानक ने धर्म को भक्ति के साथ नही जोड़ा बल्कि सामाजिकता के साथ जोड़कर मानवीय मूल्य और सदाचार के व्यवहार तक विस्तारीत किया है। उन्होंने समाज में समानता, मानवता, विश्वबंधुत्व, धर्मनिरपेक्षता, जातिविहीन समाज व्यवस्था, स्त्रियों को समानता, लोककल्याण का भाव आदि मानवीय मूल्यों के प्रसार पर बल दिया है।

उसी तरह अध्यात्मिक नेता और क्रांतिकारक तथा समाजसुधारक के रुप में और एक संत का नाम लिया जाता है। वह है महात्मा बसवेश्वर जिन्हे उच्च कोटी का संत माना जाता है। विभिन्न देवी देवीताओं की पूजा आराधना के चक्कर में पडकर जो दिशाहीन हो गये है, उन्हें दिव्य संदेश के द्वारा सरल भक्ति का मार्ग दिखाकर जनता को सहारा दिया। उन्होंने अध्यात्मिक बंधुत्व का उपदेश देकर ईश्वर के लिए सबको समान माना है।

कबीर, नानक, तुकाराम, ज्ञानेश्वर, महात्मा बसेवश्वर आदि भारतीय संतो के विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक है, जितने उस समय थे। आज जिधर देखो उधर ढोंगी साधु दिखाई दे रहे है। अपने आप को विरक्ति संन्यासी साधु समझनेवाले लोग धन के पीछे भाग रहे है। यह बात तो समाचार पत्रों में भी छपकर आयी है। कितने ही साधुओं के उपर हत्या का आरोप है। कांची मठ के शंकराचार्य जयेंद्र सरस्वती, स्वामी नित्यानंद, संत आसारामजी बापू आदि कई सारे लोग कटघरे में खडे है। भगवे वस्त्र धारण कर अपने आपको साधु बताकर दिन-रात पापलिप्सा, समाज को दिशाहीन बनानेवाले भोग की लालसा रखनेवाले साधुओं की हमारे देश में कमी नहीं है। ऐसे लोगों पर मराठी संत कवि तुकाराम प्रहार करते हुए कहते है-

''ऐसे कैसे झाले भोंदू
कर्म करो नी म्हणती साधू
अंगा लावूनियां राख
डोळे झाकुनी करती पाप
तुका म्हणे सांगू कीति-जळो तयांची संगती।''७

निष्कर्ष रुप में हम कह सकते है कि, भारतीय संत साहित्य में समस्त संसार को प्रेम के सूत्र में बांधने की ताकत है। इन संतो का संदेश विश्वबंधुत्व का संदेश है। आज हमने अक्षरों का तो सही ज्ञान प्राप्त किया है पर जीवन का ज्ञान क्या है यह हमे नही मालूम। इसी कारण भक्ति साहित्य की ज्ञानमार्गी शाखा आज भी प्रासंगिक है। अगर भारतवर्ष की एकता को बनाये रखना है तो संत साहित्य की नितांत आवश्यकता है। आज हिंदू-मुस्लिम विभेद विविध धर्मों का आपसी टकराव बढता जा रहा है और जिनके हाथ में राष्ट्र निर्माण की कुंजी है, वो अपने निजी स्वार्थ के कारण राजनीति करके धर्म, जात,सम्प्रदाय, समाज को विभाजित करने का कार्य कर रहे है। संतो का साहित्य न्याय की रक्षा का हथियार है। यह हथियार शोषण और उत्पीड़न के खिलाफ के लिए है। संतो का साहित्य नदी के प्रवाह के समान चलनेवाला है। भारतीय संतो ने परिवर्तन की लड़ाई लडी है। कबीर ने राम-रहीम को एकही दर्जा दिया है। उन्होंने हिंदू-मुसलमान भेद मान्य नही किया। यह सत्य है कि संतो का साहित्य प्रगतिशील साहित्य है।

संदर्भ :

१.संतवाणी संग्रह-भाग २ पृ.२७
२.तुकाराम अभंग
३.ज्ञानेश्वर-पसायदान
४.रामचरितमानस-तुलसीदास